छठवाँ परिच्छेद

हिन्दी एकांकी साहित्य में डा. रामकुमार वर्मा का स्थान निर्धारित करने केलिये विशेष मापदण्डों की सहायता लेने की आवश्यकता नहीं है। उन के साहित्य का मूल्यांकन ही स्थान-निर्धारण केलिये पर्याप्त है। लेकिन उन के समकालीन एकांकीकारों की रचनाओं का मूल्य भी आंकना आवश्यक है जिस के द्वारा सत्य की प्रतिष्ठा की जा सकती है। यह निर्विवाद विषय है कि डा. वर्मा ने ऐसे एकांकियों का प्रणयन किया है जो कला की दृष्टि से हिन्दी केलिये नवीन हैं और उन की लेखनी की क्षमता आज भी वैसी ही प्रगतिशील बनी हुई है और उन के जीवन-दर्शन के अनुरूप वह कभी कुण्ठित नहीं होती।

आधुनिक एकांकी के पथ-प्रदर्शक के रूप में डा. वर्मा का नाम अमर रहेगा। पाश्चात्य एकांकी कला से प्रभावित तथा अनुप्राणित होकर नयी शैली के कला-पूर्ण एकांकियों की सृजना करनेवालों में ये सर्व प्रथम एकांकीकार हैं। मुख्यतः किसी भी लेखक की साहित्यिक देन का मूल्यांकन करते समय दो प्रकार के मत दिये जाते हैं। आलोचक एकमत नहीं होते। उन के भिन्न भिन्न मतों के मूल में उन के द्वारा गृहीत मापदण्ड काम करते रहते हैं। सहृदय आलोचक, जो तथ्यान्वेषी है, केवल अपने मापदण्डों को ही प्रधान स्थान नहीं देता अपितु वास्तविकता को ग्रहण करने केलिये सर्वथा संसिद्ध रहता है। डा. वर्मा आधुनिक हिन्दी एकांकी के पथ-प्रदर्शक हैं या नहीं ? उन का एकांकी साहित्य में क्या स्थान है ? इन प्रश्नों का समाधान आलोचकों ने दो भिन्न मतों द्वारा दिया है। अपने अपने मत को प्रस्तुत करते हुये कोई उन्हें पथ-प्रदर्शक मानते हैं तो कोई पथ-प्रदर्शक के रूप में स्वीकार नहीं करते। हम नीचे इन दोनों मतों का उल्लेख करेंगे और अंत में यह स्पष्ट करेंगे कि इन दोनों में कौन-सा मत सत्यता की प्रतिष्ठा कर रहा है ?

प्रथम वर्ग के अन्तर्गत डा. सत्येन्द्र, रामनाथ सुमन, प्रो. अमरनाथगुप्त सत्य प्रसाद, सत्येन्द्र शरत आदि आते हैं जो डा. वर्मा को पथ-प्रदर्शक के रूप में स्वीकार करते हैं। डा. सत्येन्द्र ने लिखा है - "एकांकी नाटकों के टेकनीक की पूर्ण कल्पना इस संग्रह "पृथ्वीराज की आँखें" के एकांकियों में हो गई है। यदि कोई भी व्यक्ति एकांकियों का पथ-प्रदर्शक माना जा सकता है

तो उस में वर्मा जी का ही नाम लिया जायेगा। "कारवाँ" के लेखक भुवनेश्वर प्रसाद पर शॉ का बहुत प्रभाव है। स्वयं नाटककार ने माना है कि उन का सेताम बर्नार्ड शॉ का रुणी है। अतः "कारवाँ" के लेखक की इतनी उधार सामग्री के साथ एकांकी के क्षेत्र में पथ-प्रदर्शक मानना समुचित हो सकता है क्या ? डा. रामकुमार वर्मा विचार और चरित्र की उद्भावना में मौलिक है। टेक्नीक को भी उन्होंने सुस्थिर रूप दिया है, यह मानना होगा। :::

प्रो. अमरनाथ गुप्त कहते हैं - "हिन्दी साहित्य में एकांकी लिखनेवाले सर्व-प्रथम लेखक आप ही हैं। उन्होंने आधुनिक ढंग के एकांकी लिखने की नींव पथ-प्रदर्शन के रूप में डाली।" :-:

श्री रामनाथ सुमन का कथन इस प्रकार है - " श्री रामकुमार वर्मा हिन्दी में एकांकी नाटक के जन्मदाताओं में हैं। उन का पहला एकांकी नाटक "बादल की मृत्यु" है जो सन् 1930 में लिखा गया था। ::

दूसरे वर्ग के आलोचक डा. वर्मा को पथ-प्रदर्शक नहीं मानते। इन में श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त प्रमुख हैं। उन का मत यह है कि - "वर्मा जी को पथ-प्रदर्शक के रूप में हम नहीं देख सके .... एकांकी नाटक को अथवा हिन्दी साहित्य को यहाँ कोई नया पथ नहीं सुझाया गया है। सरस भाषा और भावुकता जो इन के नाटकों के प्रधान गुण हैं, वर्माजी की निजी संपत्ति है। टेक्नीक इत्यादि में वर्माजी ने कुछ नया अन्वेषण नहीं किया।" *:

कोई भी लेखक अपनी कृतियों के द्वारा पथ-प्रदर्शन का कार्य तभी कर सकता है जब वे कृतियाँ उस की अपनी मौलिक सूझ व कला से निर्मित हों। किसी दूसरी भाषा में सृजित साहित्य के अनुकरण को लेकर पथ-प्रदर्शक नहीं बन सकता, चाहे वह नवीन शैली में रचित ही क्यों न हो। डा. वर्मा ने अन्य लेखकों की भाँति पाश्चात्य लेखकों की रचनाओं का अध्ययन वस्तु तथा शिल्प के दृष्टिकोण से अवश्य किया था लेकिन उन का अंधानुकरण नहीं किया।

::: डा. सत्येन्द्र - हिन्दी एकांकी पृ. 49

:-: प्रो. अमरनाथ गुप्त - एकांकी नाटक पृ. 73

:: श्री रामनाथ सुमन - चारुमित्रा पृ. 8

* प्रो. प्रकाश चन्द्र गुप्त - एकांकी नाटक - हँस एकांकी नाटक अंक पृ.723

उन से प्रेरणा पाकर अपनी मौलिक कृतियों के निर्माण में वे संलग्न हुये हैं । उन का यह कथन इस का साक्षी है - "हमारे नाटककारों को अपनी भारतीयता नहीं भुला देनी चाहिये । उन्हें मनुष्य के साथ साथ उस के संस्कार भी रखने हैं । यदि वे संस्कार भूल जायेंगे तो मनुष्य का व्यक्तित्व भी भूलते देर न लगेगी । इब्सन और शॉ का अनुकरण हमारे नाटककारों को वहीं तक श्रेयस्कर हुआ जहाँ तक उन्हें मनोविज्ञान के चित्रित करने की शैली की आवश्यकता है । इस से अधिक नहीं ।" ::

प्रो. प्रकाशचन्द्र गुप्त ने भुवनेश्वर प्रसाद के "कारवाँ" का उल्लेख किया है और उन के अनुसार आधुनिक हिन्दी एकांकी का जन्म उसी से हुआ है । लेकिन भुवनेश्वर प्रसाद का रचना-काल सन् 1933 से प्रारंभ हुआ है । इस से पहले सन् 1930 में डा. वर्मा का आगमन एकांकी-क्षेत्र में हो चुका है । इस के अतिरिक्त भुवनेश्वर प्रसाद पर पाश्चात्य नाटकों का अत्यधिक प्रभाव पड़ा है । उन के नाटक ऐसे प्रतीत होते हैं कि पाश्चात्य नाटकों के अनुकरण मात्र हैं । स्वयम् उन्होंने भी स्वीकार किया कि उनका शैतान पात्र शा का ऋणी है । "श्यामा- एक वैवाहिक विडंबना" - पढ़ने पर शा की "कैंडिडा" स्मरण में आती है । उसी तरह उन के नाटकों को पढ़ने पर इब्सन आदि पाश्चात्य नाटककारों की रचनाओं का स्मरण हो आता है । इस दृष्टि-कोण से भुवनेश्वर प्रसाद पथ-प्रदर्शक कैसे बन सकते हैं ?

प्रथम परिच्छेद में हिन्दी एकांकियों के विकास का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करते हुये हम ने लिखा है कि प्रसाद का "एक घूँट" एकांकी नवीन और प्राचीन शिल्प-चातुरी का मिलन स्थल है । "एक घूँट" के पश्चात् डा. वर्मा रचित "बादल की मृत्यु" का नाम आता है । डा. वर्मा के एकांकी शिल्प तथा उस केलिये गृहीत विषय मौलिक हैं । एक ही दृश्य में सम्पूर्ण कथा-वस्तु का कौतूहल और जिज्ञासा के साथ प्रस्तुतीकरण और क्रमिक विकास के साथ चरमसीमा पर उस की समाप्ति, मनोवैज्ञानिक धरातल पर पात्रों का चरित्र-चित्रण, आवश्यक रंग संकेतों का विधान, आदि इन की कला की अपनी विशेषतायें हैं । उन्होंने ने अपनी रचनाओं की भूमिकाओं में एकांकी- कला

:: डा. रामकुमार वर्मा - विचार दर्शन पृ. 122

संबंधी अपने विचारों को स्पष्ट किया है। अेकांकी के प्रत्येक तत्व को लेते हुअे उन्होंने चर्चा की है। इन के अेकांकियों का सृजन उन की अपनी धारणाओं के आधार पर किया गया है। यद्यपि इन धारणाओं के बनने में पाश्चात्य अेकांकी-शिल्प के अध्ययन का हाथ है तथापि वे उन के मनन और चिन्तन से बन गई हैं। पाश्चात्य प्रेरणा तथा प्रभाव को पचाकर उन्होंने उसे भारतीय संस्कृति तथा समाज का सजीव चित्रण किया है। उन के पात्र भारतीय हैं और भारतीय वातावरण में साँस लेनेवाले हैं। जहाँ तक स्वाभाविकता, यथार्थवाद और मनोविज्ञानिकता को चित्रित करने की शैली की आवश्यकता है वहाँ तक इब्सन और शा का अनुकरण उन्होंने किया है। उन का अेक भी अेकांकी अैसा नहीं है जिस का साम्य पूर्णतः पाश्चात्य अेकांकियों से मिलता हो। उन्होंने अेकांकी शिल्प को पूर्ण रूपसे समझा है और चरमसीमा को अन्य तत्वों से प्रमुख मानकर अपने शिल्प को सुस्थिर रूप प्रदान किया है। चरमसीमा में तथ्य का निरूपण होता है और उसी में अेकांकी की समाप्ति होती है। ::: उन्होंने अपने अेकांकियों में वर्णनात्मकता की अपेक्षा अभिनयात्मकता को अधिक प्रधानता दी है। इस तरह अेकांकी की नवीन रचना पद्धति में पथ प्रदर्शन का काम उन्होंने किया है। श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त ने प्रगतिशील शैली को अधिक मान्यता दी है। संभवतः उस दृष्टिकोण से परखने के कारण डा. वर्मा के पथ-प्रदर्शन को उन्होंने स्वीकार नहीं किया। क्योंकि उन के द्वारा मान्य प्रगतिशील शैली में डा. वर्मा का योगदान नहीं रहा है। वास्तविकता और यथार्थवादिता को अधिक प्रधानता देते हुअे उन्हीं की आधार भूमि पर डा. वर्मा ने रचना की है लेकिन वे अतिवास्तविकता का विरोध करते हैं। क्यों कि अतिवास्तविकता की आधारभूमि पर जीवन की कुरूपताओं का अंकन किया जाता है। साहित्य के सौन्दर्य पक्ष को कम करते हुअे, उस से निर्दिष्ट प्रभाव को अशुभदायक बनाना उन्हें इष्ट नहीं है। उन के अनुसार प्राचीन भारतीय संस्कृति का पुनः व्यवस्थीकरण नये युग की आवश्यकताओं के अनुरूप करना अत्यन्त लाभ-दायक है। साहित्यकार को जीवन के समग्र रूप से समझकर उस की दिशा का निर्देश मानवतावदी दृष्टिकोण से करना चाहिअे। इसी कारण से डा. वर्मा अपनी रचनाओं में नैतिक आदर्शों की स्थापना करते हैं और उन आदर्शों के व्यावहारिक पक्ष पर भी ध्यान देते हैं। डा. वर्मा शिल्प तथा विषय वस्तु की दृष्टि से हिन्दी

::: तथ्य-निरूपण हो चुकने के बाद कथा-वस्तु को आगे खींचना अैसा ही है जैसा सिनेमा देखकर जाड़े में पैदल घर लौटना. डा. रामकुमारवर्मा ऋतुराज - पृ. 15

अेकांकी को अेक मौलिक विधान दिया है ।

डा. रामकुमार वर्मा की ही भाँति उन के समकालिक श्री लक्ष्मीनारायण मिश्र, भुवनेश्वर प्रसाद, उपेन्द्रनाथ अश्क, उदयशंकर भट्ट तथा से. गोविन्द दास ने पाश्चात्य शैली के अनुसरण पर अेकांकी के प्रयोग किये हैं । अेकांकी कला के प्रयोग और विकास में इन का भी महत्वपूर्ण योगदान है । लेकिन इन की शैलियाँ भिन्न हैं । जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण पृथक् रहा है । इन प्रयोगवादी अेकांकियों की वस्तुगत तथा शिल्पगत विशेषताओं का संक्षिप्त विवरण नीचे प्रस्तुत करेंगे जिस से डा. वर्मा के अेकांकी साहित्य का पृथकत्व का बोध होवे ।

श्री लक्ष्मीनारायण मिश्र ने अेकांकी के क्षेत्र में उसी तरह नये प्रयोग किये हैं जिस प्रकार नाटक के क्षेत्र में । इन के "अशोक वन", "प्रलय के पंख पर" दो अेकांकी संग्रह हैं । "अेक दिन", "कावेरी में कमल", "बलहीन" "नारी का रंग" स्वर्ग में विप्लव", भगवान मनु" अेकांकी विशेष उल्लेखनीय हैं । इन में पौराणिक, अैतिहासिक, राजनीतिक, तथा सामाजिक सभी प्रकार की समस्याओं को बुद्धिवादी मनो-वैज्ञानिक विवेचन का विषय बनाया गया है । मिश्र जी ने राजनीतिक तथा सामाजिक समस्याओं को प्रमुख रूप से अपने नाटकों में लिया है । समस्याओं के अंकन में बुद्धिवाद का विशेष योग है । उन्मुक्त प्रेम, वेश्या सुधार, नारी की चेतना, सिद्धान्त और आदर्श का खोखलापन, सुधारवाद का दम्भ, समाजवाद का व्यवहार पक्ष आदि विषयों का चित्रीकरण उन्होंने किया है । व्यक्ति की समस्या और सेक्स की समस्याओं का मनो-वैज्ञानिक विश्लेषण उन के नाटकों में किया गया है । लेकिन उन का प्रस्तुतीकरण भारतीय वातावरण के उपयुक्त नहीं है । क्यों कि यहाँ का वायुमण्डल आध्यात्मिक और नैतिक तत्वों पर निर्मित है । शिल्प की दृष्टि से भी इन्होंने नये कदम उठाये हैं । इन के नाटकों में, कृत्रिम भाषा, स्वगत कथन, संगीत, भरतवाक्य, वर्णनात्मकता आदि का परित्याग हुआ है । इन्होंने संकलनत्रय का निर्वाह किया है । इन के कुछ अेकांकियों में अनावश्यक विस्तार हुआ है और बुद्धिवाद की प्रधानता के कारण नीरसता भी आ गई है ।

भुवनेश्वर प्रसाद का सर्व प्रथम ओकांकी "श्यामा ओक वैवाहित विडंबना" सन् 1933 में प्रकाशित हुआ है । शैतान, ओक साम्यहीन साम्यवादी, प्रतिमा का विवाह, रहस्य रोमान्च, लाटरी, मृत्यु, हम अकेले नहीं, सवा आठ बजे, स्ट्राइक, ऊसर, जेरूसलेम, सिकन्दर, कौओं आदि इन के उल्लेखनीय ओकांकी हैं । इन में सेक्स संबंधी समस्याओं तथा विभिन्न मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों का अंकन हुआ है । श्यामा-ओक वैवाहित विडंबना, ओक साम्यहीन साम्यवादी, शैतान, प्रतिमा का विवाह आदि प्रथम ओकांकियों की रचना शा तथा अन्य पाश्चात्य नाटककारों से प्रभावित होकर की गई है । इन नाटकों की समस्याओं पाश्चात्य समाज की हैं । दो पुरुषों का ओक प्रेमिका केलिओ संघर्ष, विवाहिता स्त्री का पति के सम्मुख पर-पुरुष से प्रेम संबंध, आदि समस्याओं सेक्स में केन्द्रित हैं । भुवनेश्वर प्रसाद पर पाश्चात्य नाटकों का प्रभाव इतना अधिक पड़ा है कि उन के नाटकों में पात्रों के नाम तो भारतीय हैं पर उन की उन्मुक्त प्रेम, सेक्स, वैवाहिक वैषम्य आदि समस्याओं पाश्चात्य समाज की हैं । इसी कारण से इन की रचनाओं को पढ़ने पर हमें इब्सन के डाल्स हाउस, पिलर्स आफ सोसाईटी और शा के डेविल्स डिसाइपिल्स या कैन्डिडा का स्मरण आता है । इन के नाटकों में यथार्थवाद है पर अति नग्न रूप में उस का प्रस्तुतीकरण हुआ है । वे कला में अश्लीलता का अर्थ "नग्न पवित्रता" समझते हैं । उनका कथन इस प्रकार है - "प्रायः समस्त नाटककार पेटी-कोट की शरण लेते हैं और दो पुरुषों को ओक स्त्री केलिओ आमने-सामने खड़ा कर संघर्ष उत्पन्न करते हैं । मैं ने भी यही किया है । केवल बुलडाग कुत्ते के मुख से हड्डी निकाल कर अलग फेंक दी ताकि संघर्ष बराबर का हो।" शिल्प की दृष्टि से भी इन पर पाश्चात्य नाटकारों का अधिक प्रभाव लक्षित होता है । ओकांकी का प्रारंभ, पात्रों का प्रवेश, उन के कथोपकथन, रंग संकेत इत्यादि सब तत्व पाश्चात्य ढंग के हैं । इन्होंने प्रभावोत्पादकता के लिओ रंगसंकेतों का प्रयोग शा की व्यंग्य-वक्रोक्तियों की भाँति किया है । इन के "कारवाँ" का उपसंहार शा के नाटकों की भूमिकाओं से मिलता-जुलता है । इस तरह विषय-वस्तु तथा शिल्प दोनों दृष्टि-कोणों से पाश्चात्य प्रभाव से इन का साहित्य सिंचित है ।

उपेन्द्रनाथ अश्क में न अनुकरण करने की प्रवृत्ति है न विचार ग्रहण करने की । ये अपने जीवन के अनुभवों के आधार पर ओकांकियों का प्रणयन करते हैं । उन्होंने सामाजिक और पारिवारिक विषयों का चित्रण यथार्थ-वादी व्यंग्यात्मक शैली में किया है । पाश्चात्य ओकांकी शिल्प का प्रभाव इन पर भी पृष्ठभूप है । इन्होंने अेक और गंभीर मनो-वैज्ञानिक विषयों को लेकर सांकेतिक प्रतीकवाली पद्धति में नाटक रचना की है तो दूसरी ओर हास्य रस से पूर्ण व्यंग्य-गर्भित शैली में प्रहसनों का प्रणयन किया है । अश्क अपने ओकांकियों में मानव जीवन तथा समाज की आलोचना मात्र करते हैं । वे न किसी समस्या का प्रतिपादन करते न अन्त में आदर्श की प्रतिष्ठा कर के उपदेश देते । केवल समाज व्यक्ति या संस्थाओं के खोखलेपन, रूढ़ियों, अन्ध विश्वासों की बलहीनताओं का चित्रण व्यंग्यात्मक शैली से करते हैं । "अधिकार का रक्षक", लक्ष्मी का स्वागत", "तूफान से पहले" आदि ओकांकियों में यथार्थ-जीवन की झाँकियाँ हैं जिन्हें देखने पर दर्शकों का मन उन रुढियों के प्रति विद्रोह से भर उठता है । "चरवाहे", "मेमना", "चुम्बक", "चमत्कार", "खिड़की", "सूखी डाली" "अंध गली" आदि ओकांकी सांकेतिक प्रतीकात्मक शैली में रचे गये हैं । अश्क ने अभिनय कला की ओर पूरा ध्यान दिया है । इन के ओकांकी सुपाठ्य भी हैं पर वे मुख्यतः रंगमंच के लिओ रचे गये हैं । इस प्रकार अश्क ने पाश्चात्य ओकांकी शिल्प का प्रभाव ग्रहण कर रंगमंच के अनुभव के आधार पर भारतीय सामाजिक समस्याओं का मनो-वैज्ञानिक ढंग से चित्रण किया है । नये विधान के ओकांकी के प्रयोग में इन का योगदान महत्वपूर्ण है ।

इन युग प्रवर्तक ओकांकीकारों में उदयशंकर भट्ट का महत्वपूर्ण स्थान है । इन्होंने शैली पाश्चात्यों की ग्रहण की पर विषय वस्तु भारतीय संस्कृति इतिहास पुराण ओवं समाज से ली है । उन का दृष्टिकोण यथार्थवादी है । आदर्श की स्थापना को वे उस अंश तक मानते हैं जहाँ तक उस से जीवन की गति उच्च स्थिति की ओर उन्मुख हो सके । इन के प्रथम ओकांकी असहयोग, स्वराज्य, चित्तरंजनदास हैं जो राष्ट्रीयता के प्रति उन की आस्था को प्रकट करते हैं । "दस हजार" "दुर्गा" "नेता" उन्नीस सौ पैन्तीस" "वर निर्वाचन" "सेठ लाभचन्द", "स्त्री का हृदय", "नकली और असली", "बड़े आदमी की

मृत्यु" आदि इन के प्रारंभिक सामाजिक अेकांकी हैं। इन अेकांकियों में विविध प्रकार की सामाजिक समस्याओं का अंकन किया गया है। "आदिम युग" "प्रथम विवाह", "मनु और मानव" तथा "कुमार संभव" आदि अेकांकियों में मानव सभ्यता के विकास का क्रमपूर्ण चित्रण हुआ है। इन्होंने रेडियो केलिअे भी अेकांकियों का प्रणयन किया है। इन के रेडियो अेकांकियों में "गान्धीजी का रामराज्य", "अेकला चलो रे", "अमर अर्चना" "मालती माधव" "उत्तर रामचरित", मेघदूत" आदि उल्लेखनीय हैं। इन के अेकांकी साहित्य का विवेचन करते हुअे डा. नगेन्द्र ने लिखा है -- "चिन्तन और अनुभव से परिपुष्ठ भट्ट जी की जीवन दृष्टि प्राचीन और नवीन, प्रवृत्ति और निवृत्ति, अनुशासन और स्वच्छन्दता में सहज ही संतुलन कर लेती है और उस युग की समस्याओं के मर्म तक पहुँचकर व्यंग्य के द्वारा उन के समाधान की ओर संकेत कर सकती है। उन का व्यंग्य निषेधात्मक ही नहीं, रचनात्मक भी है। उस मेंकेवल भर्त्सना मात्र नहीं है, सहानुभूति भी है।" :: इन की ओर अेक अपूर्व देन भी है। वह है भाव-नाट्य। उन्होंने "विश्वामित्र", "मत्स्यगंधा", "राधा" "कालिदास", "मेघदूत", "विक्रमोर्वशी" आदि की रचना कर इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया है। इन में अन्तर्द्वन्द्वों का चित्रण अत्यन्त कुशलतापूर्वक हुआ है। इन्होंने अपने अेकांकियों की रचना रंगमंच की दृष्टि में रखकर की है। अतः इन का रंगमंच पर प्रस्तुतीकरण सरलता से किया जा सकता है। उन के अनेक अेकांकी अेक बड़े दृश्य में अंकित किये गये हैं। लम्बे रंग संकेतों के कारण वे अेकांकी सुपाठ्य भी बन गये हैं।

सेठ गोविन्ददास का क्षेत्र राजनीति, संस्कृति और समाज है। इन के नाटकों में गान्धी-युग की राजनीतिक तथा सामाजिक समस्याओं का चित्रण हुआ है। अैतिहासिक कथा वस्तुओं में नैतिक बल तथा आधुनिक जीवन का प्रतिपादन है। उन्होंने अेक सुनिश्चित पद्धति पर अेकांकियों की रचना की है। उन का कथन है कि "जिस अेकांकी में जितना बड़ा विचार होगा, उस विचार के विकास के लिअे जितना स्पष्ट और तीव्र संघर्ष होगा,

---

:: पर्दे के पीछे भूमिका पृ. 9 डा. नगेन्द्र

इस विचार और संघर्ष के लिये जितनी स्पष्ट और मनोरंजक कथा होगी जितने कम चरित्र और उन चरित्रों का जितना स्पष्ट और विशद चरित्र चित्रण होगा, तथा जितनी स्वाभाविक कृति ऐवं कथोपकथन होंगे वह उतना ही सफल होगा ।" उन के ऐकांकी इसी पद्धति पर लिखे गये हैं । डा. वर्मा की भाँति इन्होंने संकलन त्रय को आवश्यक माना है । सामाजिक ऐकांकियों की भाषा बोल-चाल की है तो पौराणिक और ऐतिहासिक नाटकों में संस्कृत - गर्भित हिन्दी प्रयुक्त हुई है । इन के सामाजिक ऐकांकियों में "धोकेबाज" "ईद की होली", "मानव मन", "मिटिमैन", "अधिकार लिप्सा", "शाप और वर", "प्रलय और सृष्टि" "हार्स-पवर" आदि उल्लेखनीय हैं । ऐतिहासिक और पौराणिक ऐकांकियों में "कंगाल नहीं", "चन्द्रापीड और स्वर्णकार", "शिवाजी का सच्चा स्वरुप", "कृष्णा कुमारी" "प्रायश्चित्त" "मद्य का मृत" आदि उल्लेखनीय हैं । राजनीतिक ऐकांकियों में ये उल्लेखनीय हैं कि "यू.नो." , "आई.सी.", "मूख हड़ताल", "सुदामा के तन्दुल" हिन्दी साहित्य में मोनो ड्रामा का प्रयोग सेठ गोविन्ददास ने ही प्रथम किया है । इन के सृजन करने में इन्होंने स्ट्रन्डबर्ग और ओ"नील की शैली का अनुसरण किया है । "प्रलय और सृष्टि", "अलबेला", "शाप और वर" और "सच्चा जीवन" इन के मोनो-ड्रामे हैं । इन्होंने उपक्रम और उपसंहार का मौलिक प्रयोग अपने नाटकों में किया है । उपक्रम ऐक प्रकार का प्रवेश है जिस में पात्रों का परिचय करा दिया जाता है । वस्तु-स्थिति तथा पूर्व कथा का समावेश भी इसी में कियाजाता है । "उप संहार" की योजना नाटक के अंत में की जाती है जिस में मुख्य दृश्यों के परिणामों का स्पष्टीकरण होता है । काल संकलन के निर्वाह में उपक्रम और उप-संहार की योजनाओं से अधिक सहायता मिलती है ।

इस तरह हम देखते हैं कि प्रयोगवादी ऐकांकीकारों की लेखन-शैलियाँ भिन्न हैं और उन के द्वारा प्रतिपादित विषय सामग्री में भी पर्याप्त अंतर है । इन का जीवन दर्शन भी पृथक पृथक है । डा. वर्मा की ऐकांकी कला सम्बन्धी मान्यताऐं इन से भिन्न हैं । डा. वर्मा ने ऐकांकी शिल्प संबंधी अपनी धारणाऐं बना लीं और उन के अनुसार लेखन-कला का प्रयोग सफलता-पूर्वक

किया है । शिल्प और विषय-वस्तु दोनों दृष्टिकोणों से इन के द्वारा हिन्दी अेकांकी को अेक नया विधान मिला है ।

यों तो किसी भी साहित्यकार की महानता उस से प्रवत्त कृतियों की संख्या पर आधारित नहीं रहती । केवल अेक कृति ही उस की महानता को स्थापित करने केलिअे पर्याप्त है, किन्तु फिर भी सफल कृतियों की संख्या का आधिक्य साहित्यकार की साधना के प्रति लगन का बोधक है । संख्या की अधिकता से उच्च श्रेणी की कला के कुण्ठित होने की संभावना रहती है । अेक ही तरह की भावनाओं का, अेक ही ढंग से बार बार चित्रण किया जाता है । अेक ही साँचे में ढली हुई प्रतिमाओं की भाँति उन में नवीनता नहीं रहती । इस के अतिरिक्त किसी भी साहित्यकार केलिअे यह कठिन है कि उस से रचित सब रचनाअें उच्च श्रेणी की ही हों । यह बहुत ही श्लाघनीय बात होगी जब साहित्यकार संख्या में अधिक कृतियाँ भेण्ट में दें और साथ ही साथ वे सब अमूल्य भी हों । इस तरह की आशा किसी महान प्रतिभा-शाली लेखक से ही की जा सकती है ।

डा. रामकुमार वर्मा के अेकांकियों की संख्या यह स्पष्ट कर रही है कि उन में रचना करने की कितनी लगन है । उन्होंने अेक सौ से अधिक अेकांकियों का प्रणयन किया है । 34 वर्षों की साधना के फलस्वरुप साहित्योद्यान में ये पुष्प खिले हैं । उन की साधना से भविष्य में प्रत्येक वर्ष नये पुष्प खिलते रहेंगे । संख्या की अधिकता के कारण उन की कला कुण्ठित नहीं हुई है । स्वयं कला-पद्धति को निश्चित कर प्रयोग-पथ पर अग्रसर होने के कारण उन की रचनाओं में विकास लक्षित होता है । उन की रचनाओं में वस्तु विविधता है । सामाजिक, राजनीतिक, दार्शनिक, धार्मिक, पौराणिक, नैतिक, कितने ही विषयों को लेकर उन्होंने अेकांकियों की रचना की है । अेक अेकांकी दूसरे अेकांकी से कभी अपनी वस्तु में मेल नहीं खाता । मानव जीवन के विभिन्न विषयों के नाटकीय क्षणों को लेकर उन्होंने रचना की है । अध्ययन तथा विवेचन की सुविधा केलिअे हमने दो भागों में विभाजित कर विवेचना की है । लेकिन सामाजिक अेकांकियों में भी विषय वैविध्य लक्षित होता है और अैतिहासिक अेकांकी भी विविध प्रकार के हैं । हाँ, उन के शिल्प विन्यास

की पद्धति सब में अेक समान है । यों तो सामाजिक तथा अैतिहासिक अेकांकियों की निर्माण-पद्धति में विभाजक रेखा खींची जा सकती है लेकिन इन की रचना पद्धति में अेकरूपता ही अधिक लक्षित होती है । उन की रचना का मुख्य उद्देश्य भी सब में अेक समान है । इन दो कारणों से कहीं कहीं उन के अेकांकियों में साम्य दृष्टिगोचर होता है । इस के पहले के अध्यायों में स्थान स्थान पर हम ने इस ओर संकेत किया है । श्री विक्रमादित्य और समुद्रगुप्त पराक्रमांक में शिल्प-विन्यास की दृष्टि से साम्य लक्षित होता है । आदर्श की स्थापना करते हुअे डा. वर्मा ने जिन सामाजिक अेकांकियों में व्यक्ति के हृदय परिवर्तन का अंकन किया है वहाँ भी शिल्प विन्यास की अेकरूपता दिखाई पड़ती है । पहले ही कहा जा चुका है कि जब यह अेकरूपता हद से अधिक होती है तो रचनाओं का मूल्य घट जाता है । डा. वर्मा के अेकांकियों में इस तरह का साम्य अथवा अेकरूपता कम मात्रा में हैं । इसी कारण से अेकरूपता के लक्षित होने परभी उन के अेकांकियों का स्थान निम्न-स्तर पर नहीं है । उन का अेकांकी साहित्य उच्च श्रेणी का है ।

रंगमंचीय अेकांकी के पुनरुद्धार में भी इन का महत्वपूर्ण स्थान है । उन्होंने अभिनेय अेकांकियों की रचना कर अन्य लेखकों की दृष्टि को इस ओर आकृष्ठ किया है । रंगमंच की आवश्यकताओं परभी उन्होंने अपनी पुस्तकों की भूमिकाओं में विस्तार से चर्चा की है । अेक दृश्य में, समस्त घटनाओं को कौतूहल तथा जिज्ञासा के साथ घनीभूत कर चरमसीमा तक ले जाना इन के शिल्प-विन्यास की पद्धति है । रंगमंच पर इस तरह विकासित अेकांकी कितने प्रेषणीय होते हैं - डा. वर्मा के अेकांकी इस के प्रमाण हैं । इन के रेडियो अेकांकियों की देन भी कम महत्व की नहीं है । यों तो साहित्य का कार्य ही मनुष्य का हित करना है । नाटक के द्वारा इस हित को क्रियात्मक रूप प्रदान करना सुलभ है । डा. वर्मा ने अपने साहित्यिक माध्यम अेकांकी का प्रयोग इसी दृष्टिकोण से किया है । भारतीय संस्कृति के पुनरुद्धार करने के उद्देश्य से, देशवासियों के चरित्रनिर्माण में सहायक संदेशात्मक रचनाओं का प्रणयन इन के अेकांकी साहित्य के "शिवं" पक्ष का प्रमाण है । हम ने उन के जीवन दर्शन पर विचार करतेहुअे उन के

इस उद्देश्य पर अधिक प्रकाश डाला है । यहाँ इतना कहना पर्याप्त है । वस्तु के प्रतिपादन की दृष्टि से ही नहीं शिल्प तत्व के साथ उस की प्रेषणीयता की दृष्टि से भी उन के अेकांकी महत्वपूर्ण हैं ।

अन्य अेकांकीकारों की अपेक्षा इन के कार्य का महत्व इसलिये अधिक है कि उन्होंने अनेक दृष्टियों से अेकांकी के विकास में योगदान दिया है । उन का व्यक्तित्व भी अन्य लेखकों से भिन्न है । उन में अेक साथ अनेक मानसिक विभूतियों का संगम देख सकते हैं । वे कवि हैं, आलोचक हैं, इतिहासकार हैं, निबन्धकार हैं और हैं अेकांकीकार । विविध प्रकार की मानसिक विभूतियों के मिलने की बात तो प्रतिभा से संबंधित है पर उन सब का समुचित उपयोग करना अेक और ही बात है । इन के "अेकांकीकार" के व्यक्तित्व को अन्य व्यक्तित्वों से बड़ा बल प्राप्त हुआ है । इन सब रुपों से सहायता लेकर अेकांकीकार का रुप निखर उठा है । जीवन की परिस्थितियों का विश्लेषण करते समय शोध विद्यार्थी के रुप में हमारे सामने आते हैं । तो परिस्थितियों के नियोजन करने में समालोचक बन जाते हैं । उन को व्यवस्थित रुप प्रदान करने में वे निबन्धकार हैं । जीवन-गत द्वन्द्व को समुचित रुप से प्रस्तुत करने में उन के पंचाधिकारी नाटककार का रुप उभर आता है । संवादों की प्रेषणीयता में इन के कवि व्यक्तित्व अधिक सहायक होता है । उन के अेकांकी साहित्य में इन सब रुपों के दर्शन होते हैं । आवश्यकतानुसार उन के इन बहुरुपी व्यक्तित्वों का समावेश अेकांकियों में हो जाता है । "वासवदत्ता" में कवि रुप, "विक्रमादित्य" में शोध विद्वान, "दीपदान" में निबन्धकार, "तैमूर की हार" में नाटककार, "समुद्रगुप्त पराक्रमांक" में आलोचक के रुप में हमारे सामने आते हैं । इस का तात्पर्य यह नहीं कि नाटककार का रुप गौण होकर केवल इन्हीं रुपों की प्रधानता उपर्युक्त नाटकों में हो गयी है । अैसा कहीं हुआ होता तो उन मानसिक विभूतियों से मुख्य कार्य में हानि ही मिली होती । "नाटककार" के रुप के सौन्दर्य को बढ़ाने में जिन अन्य रुपों की आवश्यकता पड़ती है, उन उन रुपों का आश्रय लिया गया है, वह भी समुचित मात्रा में । इसी कारण से उन के

नाटक अधिक महत्वपूर्ण बन पड़े हैं । इन

× सहयोगी अेकांकीकारों में इतने व्यक्तित्वों की अभिव्यक्ति नहीं है । इस

दृष्टिकोण से भी डा. वर्मा का महत्व अधिक लक्षित होता है । ::

इस प्रकार हम देखते हैं कि डा. वर्मा पाश्चात्य ढंग के आधुनिक अेकांकी के पथ-प्रदर्शक के रूप में हमारे सामने आते हैं । मौलिक ढंग से शिल्प को स्थिर करने में, उच्च श्रेणी के अेकांकियों के सृजन करने में, रंगमंच की उन्नति करने में तथा भारतीय जीवन के उच्च संदेश देने में इन का महत्वपूर्ण स्थान है । इन के सृजनात्मक तथा क्रियात्मक प्रयत्नों के फलस्वरूप अेकांकी रचना की अेक स्वास्थ्य परंपरा हिन्दी में स्थिर हुई और अनेक अेकांकीकारों ने इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रयोग किये हैं ।

डा. वर्मा का अेकांकी साहित्य भारती का अमूल्य आभूषण है जो सर्वदा उस के सौन्दर्य की श्री-वृद्धि करता रहता है ।

:: मुझे जितनी मानसिक विभूतियाँ प्राप्त हुई हैं, उन सब का उपयोग करता हूँ । जैसे मैं पिता का पुत्र हूँ, बच्ची का पिता हूँ, बहन का भाई हूँ - पुत्री के सामने पुत्रत्व को लेकर नहीं जाता और पिता के सामने पितृत्व को लेकर नहीं जाता वैसे ही उन उन पृथक क्षेत्रों में पूर्ण अन्य विश्वास के साथ काम करता हूँ ।

--- डा. वर्मा से अेक भेण्ट - परिशिष्ठ 1